P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-8* April- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

ऋगवेद संहिता का समीक्षात्मक अध्ययन

सुनीता सिंह
व्याख्याता,
हिन्दी विभाग,
गोचर कृषि इण्टर कालेज,
रामपुर,शहारनपुर

सारांश

–ऋगवेद संहिता – ऋग्वेद संहिता में ऋचाओं का संग्रह है। ऋचा उसे कहते है, जिसके द्वारा देवताओं का स्तुति की जाती है अथवा चरण एवं अर्थो से युक्त वृतबद्ध मन्त्रों को ऋचा कहते है। –**''पादेनार्थेन चोपेता वृतबद्धा मंत्राः।''** ।।जैमिनी न्याय सूत्र।। ऋग्वेद पुरूष सूक्त के अनुसार – इन ऋचाओं की उत्पत्ति विराट–यज्ञ पुरूष से ही बताई गई है। – ''तस्माद्य ज्ञात् सर्वहुतः ऋचः सामानिजज्ञिरे।'' महाभाष्यकार महर्षि पतGजलि के अनुसार ऋग्वेद की 21 शाखायें हैं। ''एकविंशतिघा वाहवृच्यम्।'' इनमें शाकल , वाष्काल, अश्वलायन, शाड्.शायन तथा माण्डूकायन शारवा विशेष प्रसिद्ध है आज इसमें से मात्र शांरवायन ही पूर्णरूप से उपलब्ध है, चूंकि ऋग्वेद का मण्डलों एवं सूक्तों में विभाजन तथा ऋग्वेद का सर्वप्रथम पदपाठ, शाकल ने किया अतः इसे शाक्ल संहिता भी कहा जाता है।

ऋग्वेद संहिता में मुख्यतथा देवताओं की याज्ञिक स्तुतियों का संकल्न किया गया है। जो तत्वज्ञान विषयक विचारों से परिपुष्ट होने के कारण मानव–जीवन के लिए अत्यन्त उपयोगी है। इस प्रकार इसमें कुल 33 देवताओं की स्तुतियाँ की गयी है। जिसमें इन्द्र तथा अग्नि का सर्वप्रमुख स्थान है। कही–कही नदी, पर्वत, सूर्य, उषा, वरूण इत्यादि का अत्यन्त मनोहारी प्राकृतिक चित्रण भी किया गया है। ऋग्वेद में लगभग 20 सूक्त ऐसे है। जिन्हें संवाद–सूक्त कहा जाता है। इसमें पुरूरवा – उर्वशी, सरमा–पाणि तथा विश्वामित्र–नदी, संवाद–सूक्त बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखते है। इन्हें नाटकों व महाकाव्यों का बीजभूत स्वीकार किया जाता है।

विषयवस्तु की दृष्टि से ऋग्वेद के समस्त सूक्तों को मुख्यतथा दश वर्गो में रखा जा सकता है। 1. देवता सूक्त 2. ध्रुवपद 3. कथा 4. संवाद 5. दानस्तुति 6. तत्वज्ञान 7. संस्कार 8. मान्त्रिक 9.लौकिक तथा 10. आप्रीसूक्त यद्यपि कुछ विद्वानों ने इन्हें 1. ऋषिसूक्त 2. देवतासूक्त 3. अर्थसूक्त तथा 4. छन्दसूक्त इन चार विभागों में रखा है।

मुख्य शब्द : ऋक संहिता, ऋग्वेद के ब्राह्मण एतेरेय ब्राह्मण, शांखायन ब्राह्मण ऋग्वेद के आरण्यक– ऐतरेथ आरण्यक, शांखायन आरण्यक , ऋग्वेद के उपनिषद ऐतरेयोनिषद कौषीतकी उपनिषद , वाष्कलमन्त्रोपनिषद।

प्रस्तावना

जिसके द्वारा देवताओं की स्तुति की जाती है ''वह ऋक् (ऋचा या मन्त्र) कहलाता है।'' ऋचन्ते स्तूयन्ते देवा अनयाइति ऋक्'' ऐसी ऋचाओं या मन्त्रों (मननात् मन्त्राः) के समूह का ही नाम संहिता है। यह संहिता ऋक यंजुः साम व अर्थव के नाम से जानी जाती है। इन्हीं संहिताओं का दूसरा नाम वेद है। 'वेद' की परिभाषा करते हुए आचार्य सायण ने अपने भाष्य में लिखा है – ''अपौरूषेयं वाक्यं वेदः।'' अथवा इष्ट प्राप्त्यनि–परिहारयोः लौकिककमुपायं वेदयते स वेदः।'' महर्षि दयानन्द ने वेद को परिभाषित करते हुए लिखा है। –''विदन्ति जानन्ति, विद्यन्ते–भवन्ति, विदन्ते सर्वाः सत्य विद्या यैः यत्र वा स वेदः।'' अर्थात जिसके अन्तर्गत सभी विद्याओं का ज्ञान प्राप्त होता है। उसे वेद कहते है। जहाँ तक संहिताओं की विषय वस्तु का प्रश्न है – श्रीमदभागवत कार ने लिखा है।

''ऋक यजुः सामथर्वाख्यान् वेदान पूर्वादिभिर्मुखैः।
शस्त्रमिज्यां स्तुतिस्तोमं प्रायश्चितं व्याघात् क्रमात्।।''

अर्थात् ऋक का विषय है – 'शस्त्र' 'शस्त्र' उसे कहते जो मन्त्रों द्वारा उच्चारित होता है तथा जिसका गान नहीं किया जा सकता है तथा साम का विषय है – 'स्तुति स्तोम' अर्थात स्तुति के लिए प्रयुज्यमान ऋक् समुदाय, जो उदगाता द्वारा गाया जाता है, यह स्तोम त्रिवृत, पळचदश, सप्तदश आदि अनेक प्रकार का होता है। जहाँ तक अर्थव का प्रश्न है। इसका प्रतिपाद्य विषय है–''प्रायश्चित'' श्रीधर

स्वामी का कथन है कि प्रायश्चित का लक्ष्य ब्राह्मकर्म (ब्राह्म नामक ऋत्तिक का कर्म) है।

अध्ययन का उद्देश्य

इस शोध में मैंने यह प्रयास है कि ऋग्वेद संहिता में महत्वपूर्ण ब्राह्मण, उपनिषद् तथा अरण्यक द्वारा भारतीय समाज में वैदिक संस्कृति तथा वैदिक ग्रन्थों के विषय में जो भ्रान्तियाँ है कि वेद आखिर है क्या ? वेद के प्रकार क्या है ? इसमें ऋग्वेद को प्रथम स्थान क्यों प्राप्त है ? तथा इसमें किस प्रकार के मन्त्रों का उल्लेख है। इसे संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। मूलतः ऋग्वेद में देवताओं की स्तुति करने में जिन–जिन मन्त्रों का प्रयोग किया गया है, पूजन, आरती तथा मन्त्रों में अंतर को स्पष्ट किया गया है।

साहित्य अवलोकन

ऋग्वेद की संहिता को 'ऋक–संहिता' कहते है वस्तुतः क अर्थ है स्तुति पर मंत्र और संहिता का अभिप्राय संकलन से है चारों वेदों में सर्वोच्च स्थान ऋग्वेद को ही प्राप्त है। इसे विश्व का प्राचीनत ग्रन्थ होने का गौरव प्राप्त है। इसे परम पूज्यनीय माना जाता है और बसन्त पूजा आदि के अवसर पर सर्वप्रथम वेद पाठ ऋग्वेद से ही प्रारम्भ किया जाता है। विद्वानों के अनुसार ऋग्वेद 3500 वर्षो से भी अधिक प्राचीन एवं इसमें 1017 सूक्त है। ऋग्वेद के मंत्र ब्रह्म की प्राप्तिकराने वाले वाक की प्राप्ति कराने वाले, प्राण या तेज की प्राप्ति कराने वाले और अमरत्व के साधन है ये पंचतत्वों–अग्नि, वायु, मेघ, विद्युत, सूर्य का प्रतिनिधित्व करते है। ऋग्वेद संहिता में कुल 20 छन्दों का प्रयोग हुआ है जिसमें चार छन्द– त्रिष्टुप, गायत्री, जगती एवं अनुष्टुप है। इसमें तत्कालीन समाज की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व्यवस्था तथा संस्थाओं का विवरण है इसमें प्रत्येक मंत्र किसी न किसी देवता से सम्बद्ध है। ऋग्वेद में ही मृत्युनिवारक त्रयम्बक–मंत्र या मृत्युंजय मंत्र (7/59/12) वर्णित है। विश्वविख्यात गायत्री मंत्र (ऋ 03/62/10) भीइसीमेंवर्णितहै।

ऋक संहिता का सामान्य परिचय

शांखायन और कौषीतकि पृथक् ब्राह्मण

ऋग्वेद की 21 शाखाओं के उल्लेख जिन–जिन पूर्वोक्त ग्रन्थों में आये हैं, सभी में शांखायन और कौषीतकि का पृथक–पृथक् नामोल्लेख है। आश्वालयन गृह्यसूत्र (4, 2–4, 4,3,3–5) में तीन प्रमुख गणों का उल्लेख हैं, माण्डूकेय, शांखायन और आश्वलायन। माण्डूकेय के अन्तर्गत जानन्ति वाहवि, गार्ग्य, गौतम, शाकल्य, वाभ्रव्य, माण्डव्य, माण्डूकेय, आचार्यों का उल्लेख है। शांखायन गण के अन्तर्गत कहौल कौषीतक, पैंगय, महापौंगय, सुयज्ञशांखायन आदि आचार्यों का उल्लेख है। आश्वलायन गण के अन्तर्गत ऐतरेय, महैतरेय, शाकल, वाड०सुजात तक, औदवाहि, महौदवाहि, सौजामि, शौनक, आश्वलायन आचार्यों का उल्लेख है। इन सभी में शांखायन तथा कौषीतकि नाम पृथक–पृथक हैं, किन्तु दोनों नाम एक ही गण के अन्तर्गत हैं। अतः दोनों समान प्रतीत होते हैं। शांखायन ब्राह्मण आनन्दाश्रम पूना से प्रकाशित हुआ और उपलब्ध है, किन्तु कौषीतकि ब्राह्मण पुस्तक रूप में उपलब्ध नहीं हो सका। कीथ ने कौषीतकि का अनुवाद किया है, किन्तु इसको देखने से इसका शांखायन से कोई विशेष भेद दृष्टिगत नहीं होता है। हो सकता है कि कहीं–कहीं ही पाठान्तर हो। साथ ही शांखायन ब्राह्मण नाम से प्रकाशित ग्रन्थ में अनेक स्थानो पर कौषीतकि का कथन कहकर पुष्टि की गई है। फलतः इन दोनों में समानता स्वाभाविक है।

ऋग्वेद के ब्राहमण

ऋग्वेद के दो ब्राहमण उपलब्ध है–

ऐतरेय ब्राहमण

ऐतरेय ब्राहमण महिदास ऐतरेय की रचना है। महषि ऐतरेय को ऐतरेय ब्राहमण तथा ऐतरेय आरण्यक के पृथ्वी देवता के द्वारा प्रतिभासन होने के सम्बन्ध में आस्यायिका कही गई है। आचार्य सायण ने लिखा है कि ऐतरेय ब्राह्मण के आविर्भाव के विषय में सम्प्रदायविद इस आख्यायिका को कहते हैं कि किसी महर्षि की इतरा नामिका पत्नी के पुत्र यह महिदास थे। पिता का अन्य पत्नियों के पुत्रों में स्नेंह होने के कारण एक बार यज्ञसभा में इनकी गोदी में न बैठाकर अन्य पुत्रों को बैठा लेने से खिन्न मन महिदास को जानकर उनकी माता ने अपनी कुलदेवता पृथ्वी को याद किया। पृथवी देवता ने यज्ञ सभा में प्रकट होकर महिदास को दिव्य सिंहासन प्रदान कर उस पर बैठाकर उसे विद्वान् समझकर इस 'ब्राह्मण' के प्रतिभासन का वरदान दिया। उसके अनुग्रह से महिदास ने ऐतरेय ब्राहमण एवं ऐतरेय आरण्यक की रचना की ।

श्री बलदेव उपाध्याय ने लिखा है कि कथानक के अनुसार ये किसी शूद्रा इतरा के पुत्र थे। परन्तु इसमें ऐतिहासिक तथ्य थोड़ा सा भी प्रतीत नहीं होता। अवेस्ता में ऋत्विज अर्थ में व्यवहृत 'एथ्रेय' शब्द उपलब्ध होता है। विद्वानों का अनुमान है कि 'ऐतरेय' शब्द भी इसी एथ्रेय से साम्य रखता है तथा इसका भी अर्थ ऋत्विज ही है।

ऐतरेय ब्राह्मण में 8 पंचिका 40 अध्याय तथा 286 खण्ड हैं। प्रत्येक पंचिका में 5 अध्याय है। प्रत्येक अध्याय में खण्ड हैं, जिनकी पृथ्क–पृथ्क संख्या है।

ऐतरेय ब्राह्मण में आरम्भ के सोलह अध्यायों में सोमयाग की प्रकृति, अग्निष्टोम का वर्णन किया गया है। प्रारम्भ में 14 अध्यायों में दीक्षणीयेष्टि, प्रायणीयेष्टि, सोमश्रयण, आतिथेयुष्टि, प्रवर्ग्येष्टि, उपसद, अग्निसोमप्रणयन, हविर्धानप्रणयन, पशुयाग, प्रातः सवन, माध्यन्दिन सवन, तृतीयसवन, उदयनीय अवभृथ आदि का उल्लेख है। 15 से 17 अध्याय तक सोमयज्ञ की विकृति उदथ्य षोडशी, अतिरात्र, तथा आश्विनशस्त्र का वर्णन है। 17वें अध्याय के छठे खण्ड से 18 वें अध्याय तक दीर्घ समय तक चलने वाले सत्रों का वर्णन है। सत्रों में 361 दिन (संभवतः तात्कालिक एक वर्ष) तक चलने वाले गवामयन का वर्णन किया गया है, जो सत्रों की प्रकृति माना जाता थां। 19 से 24 वें अध्याय तक द्वादशाह का वर्णन किया गया है। 25वें अधय में अग्निहौत्री, अग्निहौत्री गौ तथा प्रयश्चितों का वर्णन है। 26से 30 अध्याय तक ग्रावस्तुत, सुब्रह्मण्य, मैत्रावरूण, ब्राह्मणाच्छंसि, अच्छावाक नामक अन्य होता ऋत्विजों के कार्य तथा पृष्ठ्यषडह सोमयज्ञ में पढ़े जाने वाले सूक्तों का उल्लेख है। 31 वें अध्याय में पशु के 36 विभाजन तथा उसमें पुरोहित आदि सबके भागों का वर्णन है। 32वें अध्याय में आहिताग्नि पर

आपत्तियों के समय अग्निहौत्रविधान का उल्लेख है। यह 25वें अध्याय का सातत्य प्रतीत होता है। 33वें अध्याय से राजसूय यज्ञ का वर्णन प्रारम्भ हो जाता है। इस अध्याय में प्रसिद्ध शुनः शेप आख्यान है, जो अभिषेक के बाद राजा को सुनाया जाता था। 34 से 39 अध्याय तक पुनरभिषेक ऐन्द्र महाभिषेक, पौरोहित्य कार्य व उसके महत्व का उल्लेख है। 40 वें अध्याय में 'ब्रसपरिमर' नामक शत्रुओं को नष्ट करने के लिए आभिचारिक कृत्य का वर्णन है। राजसूय यज्ञ के वर्णन से युक्त अध्याय ऐतिहासिक तभा भौगोलिक दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण है।

शांखायन ब्राह्मण

शांखायन ब्राह्मण शांखायन ऋषि द्वारा प्रोक्त हैं। महिदास ऐतरेय के समान शांखायन के विषय में न तो कोई कथा और न उद्धरण प्राप्त होते हैं। इस ब्राह्मण के अन्तर्गत कौषीतकि के मत की अनेक स्थानों पर चर्चा हुई है, किन्तु इस ऋषि के बारे में भी कोई सामग्री उपलब्ध नहीं है।

शांखायन ब्राह्मण में 30 अध्याय हैं और 276 खण्ड हैं। प्रत्येक अध्याय में खण्डों की संख्या पृथक् है। शांखायन ब्राह्मण में 7वें अध्याय से सोमयाग का वर्णन प्रारम्भ होता है। इससे पूर्व इष्टियों आदि का वर्णन है। पहले अध्याय में अग्न्याधान, दूसरे अध्याय में अग्निहोत्र, तीसरे में दर्श पौर्णमास इष्टि, चौथे में आग्रयण आदि नवान्नेष्टि तथा अन्य इष्टियां, पांचवें में चातुर्मास्य यज्ञ, छठे में ब्रह्मा पुरोहित के कार्य, अग्याधान से चातुर्मास्य इष्टिपर्यन्त सब हर्वियज्ञों की प्रशंसा तथा महादेव के विविध रूपों का वर्णन है। सातवें से सोलहवें तक दीक्षणीयेष्टि, प्रायणीयेष्टि, अतिथ्येष्टि, अग्निमन्थन, बलिपशुप्रशंसा, प्रवर्ग्येष्टि, उपसद्, अग्निप्रणयन, हविर्धानप्रवर्तन, सोमप्रणयन, यूपनिर्माण, पशु याग, द्विदेवत्य ग्रह आदि का वर्णन है। सोलह तथा सत्रह अध्याय में सौत्रामणि उक्थ्य, षोडशी, अतिरात्र, आदि सोमयाग के विकृतियागों का उल्लेख हैं। अठारहवें से पुनः सोमयाग सम्बन्धी आश्विनशस्त्र, अवमृध, पशुपुरोडाश, देविकाओं को हवि, अभिप्लव षडह, पृष्ठ्यषडह, अभिजित, विषुवन्तदिवस, विश्वजित आदि का वर्णन है। छब्बीसवें में दीर्घसमय तक चलने वाले सत्रों में व उनकी प्रकृति गवामयन यज्ञ का उल्लेख है।

ऋग्वेद के आरण्यक

ऐतरेय आरण्यक

ऋग्वेद के दो आरण्यकों में अन्यतम आरण्यक यही है, जो ऐतरेय–ब्राह्मण का ही परिशिष्ट भाग है : इनमें पांच आरण्यक है, जो वस्तुतः पृथक ग्रन्थ माने जाते हैं। ऐतरेय आरण्यक के अवान्तर्गत पाँचों आरण्यकों के आद्य पदों का पाठ पृथक रूप से करते हैं। यह इनके पृथक ग्रन्थ मानने का प्रमाण माना जा सकता है। ऋग्वेद के मन्त्रों का बहुशः उद्धरण 'तदुक्तमृषिणा' निर्देश के साथ यहाँ किया गया है।

प्रथम आरण्यक में महाव्रत का वर्णत है, जो ऐतरेय–ब्राह्मण (प्रपाठक 3) के 'गवामयन' का ही एक अंश है। द्वितीय प्रपाठक के प्रथम तीन अध्यायों में उक्थ या निष्केवल्य शस्त्र तथा प्राणविद्या और पुरूष का विवेचन है। चतुर्थ, पंचम तथा षष्ठ अध्यायों में ऐतरेय उपनिषद है। तृतीय आरण्यक का दूसरा नाम है संहितोपनिषद्, जिसमें संहिता, पद, क्रम पाठों का वर्णन तथा स्वर व्यंजन आदि के स्वरूप का विवेचन है। इस खण्ड में शाकल्य तथा मण्डूकेय के मतों का उल्लेख है। इसमें निर्भुज (संहिता), प्रतृण्ण (पद), सन्धि, संहिता आदि पारिभाषिक शब्द प्रयुक्त हुए हैं। चतुर्थ आरण्यक बहुत ही छोटा है, जिसमें महाव्रत के पंचम दिन में प्रयुक्त होने वाली कतिपय महानाम्नी ऋचायें दी गयी हैं। अन्तिम आरण्यक में निष्केवल्य शस्त्र का वर्णन है। इन आरण्यकों में प्रथम तीन के रचियता ऐतरेय, चतुर्थ के आश्वलायन तथा पंचम के शौनक माने जाते हैं।

शांखायन आरण्यक

यह ऋग्वेद का दूसरा आरण्यक है। इनमें पन्द्रह अध्याय हैं। इसके तृतीय से लेकर छठें अध्याय तक कौषीतकि उपनिषद् तथा सप्तम–अष्टम अध्यायों को संहितोपनिषद कहते है। इसमें भिनन अध्यायों में आरण्यक के मुख्य विषयों का प्रतिपादन किया गया है।

प्रथम तथा द्वितीय अध्यायों में महाव्रत का वर्णन उपलब्ध होता है। इस आरण्यक में होतृ नामक ऋत्विज् द्वारा प्रयुक्त शस्त्रों का वर्णन मिलता है। महाव्रत के समय आनुष्ठानिक विधानों का विवरण शांखायन श्रौतसूत्र (17–18वें अध्याय) में उपलब्ध होता है। कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद चार अध्यायों में विभक्त होकर (तृतीय–षष्ठ अ0) इसी आरण्यक का अंश है तथा संहितोपनिषद् इसके आगे के दो अध्यायों में (सप्तम अष्ठ अ0) विद्यमान है। ये दोनों ही उपनिषद् शांखायन आरण्यक के अविभाज्य अंग हैं। नवम् अ0 में प्राण के श्रेष्ठता का वर्णन है। दशम अ0 में आन्तर अग्निहोत्र का बड़ा ही सुन्दर वर्णन है। 15वें अध्याय में आचार्य का वंश वर्णित है।इसके अध्ययन से स्पष्ट है कि इस आरण्यक के द्रष्टा का नाम गुणाख्य शांखायन था और उनके गुरू का नाम था कहोल कौषीतकि।

ऋग्वेद के उपनिषद

ऐतरेयोपनिषद

ऐतरेय आरण्यक के द्वितीय आरण्यक के अन्तर्गत चतुर्थ से लेकर षष्ट अध्यायों का नाम 'ऐतरेय – उपनिषद्' है। इसमें तीन अध्याय है जिनके द्वितीय तथा तृतीय अध्याय तो एक–एक खण्ड के हैं। प्रथम अध्याय में दो खण्ड हैं, जिसमें सृष्टितत्व का मार्मिक विवेचन है, मनुष्य का शरीर ही पुरूष के लिए उपयुक्त आयतन सिद्ध किया गया है, जिसके भिन्न–भिन्न अवयवों में देवताओं ने प्रवेश किया, तदनन्तर परमात्मा उसके मूर्घ–सीमा के विदीर्ण कर प्रवेश करता है। तदनन्तर गुरूकृपा से बोध के अनन्तर सर्वव्यापक शुद्धस्वरूप का साक्षात्कार होता है तथा 'इन्द्र' की संज्ञा प्राप्त होती है। अन्तिम अध्याय में 'प्रज्ञान' की विशेष महिमा प्रदर्शित है जिसमें निः सन्देह यह उपनिषद् आदर्शवाद का प्रतिपादक सिद्ध होता है।

कौषीतकि उपनिषद्

यह शांखायन आरण्यक के चार अध्यायों में (तृतीय अ0 से षष्ठ अ0 तक) वर्णित है। यहाँ प्रज्ञा तथा प्राण की महत्ता का विशद विवेचन है। प्रज्ञा के द्वारा ही जीवन नाना लोकों से होता हुआ ऊर्ध्वतम लोक ब्रह्मलोक की प्राप्ति करता है (प्रथम अ0)। अनन्तर के अध्याय में

कौषीतकि ऋषि प्राण की श्रेष्ठता का निरूपण करते हैं। प्राण को ब्रह्म मानने का उपदेश यहाँ दिया गया है। सन्ध्यावदन सम्बन्धी भी अनेक उपदेश है। तृतीय अ0 में सांगोपाग निरूपण है। इस अध्याय का कथन है कि अग्निहोत्र के द्वारा तृप्त तथा अपर्याप्त देव जीवन के भीतर ही विद्यमान हैं। बाह्य अग्निहोत्र के द्वारा इनकी तृप्ति होती है। जो साधक इस आन्तरिक तत्व को न जानकर केवल बाहरी हवन में ही अनुरक्त रहता है, वह भस्म में हवन करता है। मृत्यु को दूर करने के लिए एक विशिष्ट याग का 11वाँ अध्याय में विस्तृत विवरण दिया गया है। 12वें अध्याय में विल्व के फल से एक मणि बनाने की प्रक्रिया, काल तथा स्वरूप का वर्णन है, जिसके धारण करने से साधक अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है। 13वें तथा 14वें अध्याय में बड़े संक्षेप में आत्मा तथा ब्रह्म के ऐक्य की प्राप्ति का प्रतिपादन जीवन की सर्वोत्तम उपलब्धि बताई गई है। 'आत्माऽवगम्योऽहं ब्रह्मास्मोति' यही 'मैं ही ब्रह्म हूँ,'यही सर्वोच्च उपदेश है इस आरण्यक का और इसकी पुष्टि में यह ऋचा उद्घृत है–

ऋचां मूर्धानं यजुषामुत्तामांग्ड
साम्नां शिरोऽथर्वणां मुण्ऽमुण्ऽम्।
नधीतेऽधौत– वेद माहुस्तमज्ञं
शिरस् छित्वाऽसौ कुरूते कबन्धम्।।

इस ऋचा का निष्कर्ष यही है कि 'अहं ब्रह्मास्मि' यही महावाक्य है ऋक् की मूर्धा, यजुष का उत्तमांग, साम का शिर तथा अथर्वा का मुण्ड। इसे जो नही पढ़ता, उसका वेद पाठ निरर्थक है वह पाठक वेदों का शिर काट कर उसे बन्ध बना देता है। इन्द्र के पास राजा प्रतर्दन के उपदेशार्थ जाने के उल्लेख है। इन्द्र के उपदेश का मुख्य रूप है प्राण तथा प्रज्ञा की महत्ता। प्राण के द्वारा आयु की तथा प्रज्ञा के द्वारा सत्य–संकल्प की प्राप्ति होती है।

षष्ठ अध्याय में काशीराज अजातशत्रु एवं बालाकि का दार्शनिक संवाद ब्रह्म् के स्वरूप, ज्ञान तथा प्राप्ति के विषय में है।

वाष्कलमन्त्रोपनिषद्

यह उन चार नव प्राप्त उपनिषदों में से अन्यतम है, जो केवल फारसी लैटिन एवं जर्मन अनुवादों से हमारे स्मृतिपटल पर थे और अत्र जिनकी केवल एक–एक पाण्डुलिपि आड.यार लाइब्रेरी में प्राप्त है। इसका प्रकाशन तीन बार हुआ हैः 1. मद्रास से 2. डा0 वेल्वेल्कर द्वारा और 3. अष्टादश उपनिषद के अन्तर्गत वैदिक – संशोधन – मण्डल, पूना से। यह ऋग्वेद की उस वाष्कल शाखा केअन्तर्गत है जो अब अप्राप्य है। इसमें कुल 25 मन्त्र है, आत्मतत्त्व ही प्रतिपाद्य विषय है।

निष्कर्ष

इन विविध विषयों से सन्निविष्ट होने के कारण ऋग्वेद को अन्य वेदों की अपेक्षा अधिक गरिमापूर्ण स्थान प्राप्त है। यजुस साम और अर्थव संहिताओं के अंतर्गत जिन विषयों का विवेचन किया गया है वे सभी मूल रूप से ऋग्वेद में निहित है। यहाँ तक कि ब्राह्मणों एवं अरण्यकों का भी मानना है कि जिन विषयों का प्रतिपादन ब्राह्मणों एवं अरण्यकों ग्रन्थों में किया गया है वह उनकी अपनी मौलिक– विषय वस्तु नहीं है, अपितु वे सभी मूलरूप से ऋग्वेद में पहले से ही निहित है। चाहे वह प्राणविद्या हो, या प्रतिकोपासना हो या ब्रहमविद्या ही क्यों न हो। इन तथ्यों के अतिरिक्त प्रथममण्डल के 164 वे सूक्त में लगभग 52 ऋचाएँ प्रहेलिका के रूप में ही गयी है, जो अत्यन्त क्लिष्ट, सारग्रर्थित तथा अर्थबोध होने पर परमानन्द को देने वाली है। इन प्रहेलिका ऋचाओं के ऋषि दीर्घतमा है। दूसरीमुख्य बात यह है कि ऋग्वेद का प्रारम्भ 'अग्निसूक्त' से तथा अन्त 'संज्ञानसूक्त' से किया गया है।

इस शोध लेख के माध्यम से यह कहा जा सकता है कि वेद का मूल ऋक वेद ही है तथा अन्य तीनों वेद इस वेद रूपी वृक्ष की शाखाएँ है क्योंकि बिना जड के पौधे की उत्पत्ति सम्भव नहीं है। इसका प्रमाण भारतीय संस्कृति के सभी ग्रन्थों में मिलता है तथा इसे प्रथमतः एवं सर्वोच्चतम् स्थान प्राप्त है यह भारतीय संस्कृति तथा हिन्दू धर्म का शिरमौर है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *संस्करण– सायण भाष्य के साथ सं0 आनन्दश्रम, संस्कृत ग्रन्थावली संख्या 38, पूना, 1898 तथा कीथ द्वारा अंग्रेजी अनुवाद (आक्सफोर्ड)*
2. *ऐ0ब्रा0 (क) 1,1,1 (भूमिका) प्रकृतस्य तु ब्राह्मणस्यैतरेयकत्वं ....तस्या रूतरायाः पुत्रौ महिदासारथः कुमारः.........तद्नुग्रहाचस्य महिदासस्य मनसाऽग्निर्वेदवानामवम......... ब्राह्मणमाविरभुदिति।*
3. *केवलानन्द सरस्वती – ऐतरेय ब्राह्मण–आरण्यक कोषः प्रस्तावः, पृ 24*
4. *मैक्समूलर–एहिस्ट्रीऑफ एसेन्टसंस्कृतलिटरेचर/हिंदी,*
5. *चौखम्बासंस्कृतसीरिज 15, सन् 1998*
6. *कीथ– ऋग्वेदब्राह्णाजे,*
7. *थ्योडोरआफेज–कैटलोगसऑफसंस्कृतमेनस्क्रिप्टभाग–1 5– 1869*
8. *भीमदेव शास्त्री वी0वी0रिसर्चइन्स्टीट्यूट होशीयारपुर– 15,1980*